भारतीय कला, धर्म और संस्कृति के पारस्परिक सम्बन्धों का विवेचनात्मक अध्ययन

डॉ0 रीता सिंह
(यू0जी0सी0) पी0डी0डब्लू0एफ0
ललित कला विभाग मेरठ कॉलिज, मेरठ

मानव ने भारतीय संस्कृति को जहाँ समाज में परम्पराओं का सौन्दर्य प्रदान किया है वहीं उनकी सहज अभिव्यक्ति अपनी कला के माध्यम से इतिहास के रूप में आज भी जीवित है। विश्व में प्रत्येक क्षेत्र की अपनी संस्कृति का अपना प्रभुत्व रहा है। परन्तु भारतीय संस्कृति की छाप विश्व स्तर पर मानव को अपनी ओर सदैव आकर्षित करती रही है। भारतीय संस्कृति की छाप अनेकों सभ्यताओं में दिखाई पड़ती है। जो वहाँ की रहन–सहन की कला में स्पष्ट दिखाई देती है। बौद्ध धर्म यद्यपि भारत से लुप्त हो चुका है तब भी उसकी याद को नूतन बनाये रखने वाले ऐसे अवशेष सहस्त्रों की संख्या में आज भी है जो कला जगत की उत्कृष्ट पहचान है।

मानव–संस्कृति के गंभीर अध्येताओं ने इस बात को अनेक प्रकार से लक्षित किया है कि धर्म, उपासना या पूजा–भाव की जड़ें इतिहास, आद्यैतिहास और प्रागैतिहास तक की ज्ञात सीमाओं से भी अधिक व्यापक एवं गहरी है। उनका प्रसार कदाचित् मानव–अस्तित्व के प्राचीनतम प्रमाणों के उस पार की अज्ञात अंधकारमय कंदराओं तक जाता है।[1] आधुनिक विचारकों की दृष्टि में बाह्यतः ही संस्कृति धर्म से पृथक और प्रतिमुख दिखायी देती है। मूलतः दोनों अभिन्न ही नहीं अविच्छिन्न भी कही जा सकती है, क्योंकि उनका उद्भव अन्योन्याश्रित रूप में हुआ है तथा दोनों का सम्बन्ध–सूत्र चेतन जगत् से परे अवचेतन जगत् तक व्याप्त है।[2]

सौन्दर्य सदैव अपनी आभा बिखेरता है। चित्रकला भी रंग और रेखाओं की बारीकियों के साथ अपने अस्तित्व का विकास करती रही है। "इतना ही नहीं, उसकी धार्मिक अभिव्यक्तियों और आध्यात्मिक प्रतीकों में भी "सुन्दर" मंगल–दीप की भाँति जलता है। यह भारतीय संस्कृति की विशिष्टता है।[3]

भारतीय कला व संस्कृति सदैव ही उदार रही है। उदार होते हुए भी इसमें इतना लचीलापन रहा है कि देश–विदेश, पिछली नस्लों (विभिन्न जातियों – प्रजातियों) को आत्मसात कराती रही है। भारतीय कला की अपनी एक अनूठी विशेषता–रूपायित सांस्कृतिक जीवन एक इतिहास बन गया है। भारतीय कला के अंतर्गत भारतीय संस्कृति को सदैव जीवित रखने का जो प्रयास कलाकार आदि काल से आज तक करते रहे हैं उससे आज कोई भी अछूता नहीं है। आज कलाकार जहाँ एक ओर अपनी अंतःभिव्यक्ति को शान्त करने का प्रयास करता है वही उसे भारतीय संस्कृति के रस का भी रसास्वादन करता है और साथ ही अपने जीवन यापन के लिए अपनी कला को आधुनिक समाज की बदलती संस्कृति के अनुरूप भी चित्रांकन कार्य कर अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह कुशलता पूर्वक कर रहा है।

भारतीय कला व संस्कृति की यशो गाथा के जीवत प्रमाण हिन्देशिया से लेकर मध्यएशिया तक के विस्तृत भू–भाग में दृष्टिगोचर होते हैं। आज हम इस विस्तृत भू–भाग को भारतीय कला व संस्कृति से

---

1 प्रिहिस्टॉरिक रेलीजन, पृष्ठ 15

2 नोट्स टुवार्ड्स दि डेफिनिशन ऑफ कल्चर, पृष्ठ 15, 68

3 हमारी सौन्दर्य सम्पदा, डॉ0 हरद्वारी लाल शर्मा, पृष्ठ 31

प्रभावित देखते हैं तो आश्चर्य होता है। उस समय यह सब कैसे सम्भव हुआ होगा। भारतीय कला की प्राचीन अजन्ता की गुफाओं में जो अनुपम सौन्दर्य विद्यमान है उसके साक्ष्य आज विश्व के सामने विद्यमान है। अजन्ता की गुफाएं त्रिवेणी (चित्रकला, मूर्तिकला व स्थापत्य कला) के नाम से भी जानी जाती है वही राजस्थान की लघु चित्र परम्परा से भी कोई अन्जान नहीं है। भारतीय कला के इतिहास में जहाँ कला एक ओर उच्च कोटि या चरम सीमा पर पहुँची वहीं दूसरी और पाल व अपभ्रंश शैली जैसी गिरावट भी दिखाई पड़ती है परन्तु फिर भी भारतीय कला अपनी पहचान विश्वस्तर पर बनाने में सदैव सक्षम रही है।

भारतीय संस्कृति का पूर्ण प्रभाव राजस्थानी चित्रकला में सबसे अधिक व्याप्त रहा है। भारतीय संस्कृति राजस्थानी चित्रकला में सदैव से जीवित रही है। "प्रत्येक संस्कृति कुछ प्रतीकों का निर्माण करती है। जिस प्रकार फल में सारे वृक्ष का विस्तार समाया रहता है, उसी प्रकार प्रतीकों में अनन्त अर्थ समाया रहता है। हमारे यहाँ सूत्र ग्रन्थों की रचना प्रसिद्ध है। सारांश यह है कि शास्त्रों के सिद्धान्त उन सूत्रों में समाये रहते हैं। प्रतीक मानो संस्कृति के सूत्र ही हैं।[4]

भारतीय कला में विद्यमान अनेकों गुणों–विशेषताओं के उपरान्त भी भारतीय कला के चित्रों के विषय सदैव भारतीय संस्कृति पर ही आधारित रहे हैं। भारतीय संस्कृति की छाप जहाँ एक ओर अजन्ता के चित्रों में भगवान बुद्ध पर आधारित जातक कथाओं, स्तूपों आदि पर दिखाई देती है वही एलोरा की गुफाओं में आठवीं शती की बनी एलीफेंटा की गुफा में "शिव महेश्वर की विख्यात मूर्ति (त्रिमूर्ति) में भी भारतीय संस्कृति की अपनी अनोखी छाप विद्यमान है। छठी शती० में मथुरा में बनी 'अभय मुद्रा' में भगवान बुद्ध की प्रतिमा राज्य संग्राहलय लखनऊ में है। भगवान बुद्ध की प्रतिमा सीधी खड़ी है एक हाथ में वस्त्र पकड़ा है व दूसरा हाथ आर्शीवाद के लिए उठा है। मुख के चारों ओर प्रभामंडल बना है जो अलंकृत है। हमारी संस्कृति व धर्म में देवी–देवताओं के मुख पर तेजस्व प्रदर्शित करने हेतु प्रभामंडल बनाया जाता था। इसी प्रकार का एक ओर चित्र बुद्ध भगवान का है जो 1700 ई० में तिब्बत में बना है उसमें भी मुख के चारो ओर सादा प्रभामण्डल बना है।

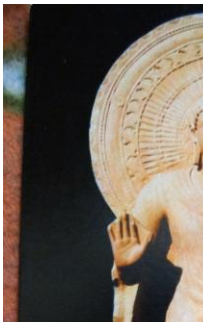

भारतीय राजस्थानी शैली, पहाड़ी शैली में भी भारतीय संस्कृति की छाप इनके चित्रों

के विषयों में स्पष्ट झलकती है। रामायण, महाभारत, राग–रागिनी, गीत–गोविन्द रसमंजरी, नल दमयंती आदि अनेक धार्मिक व पौराणिक ग्रन्थ हैं जिन्हें उस समय कलाकारों ने चित्रित किया। 1750 ई० में राजस्थानी शैली (किशनगढ़) में बने "राधा–कृष्ण" के चित्र में श्री राधा व कृष्ण के मुख मण्डल को

[4] भारतीय संस्कृति, पांडुरंग सदाशिव जोशी, पृष्ठ 272

प्रभावशाली बनाने के लिए प्रभामण्डल बनाया गया है। वृक्षों के मध्य राधा–कृष्ण को वार्तालाप करते चित्रित किया गया है। वहीं 1730 ई० में पहाड़ी शैली (बसोहली) में बना "कमलासन पर लक्ष्मी–नारायण" के चित्र में भगवान नारायण व देवी लक्ष्मी जी को कमल पर आसीन दिखाया है। कमल पुष्प का मुकुट धारण किए नारायण जी के हाथों में शंख, चक्र, गदा व पदम शोभायमान है। कमल पृष्प भारतीय संस्कृति व धर्म में पूजनीय है।

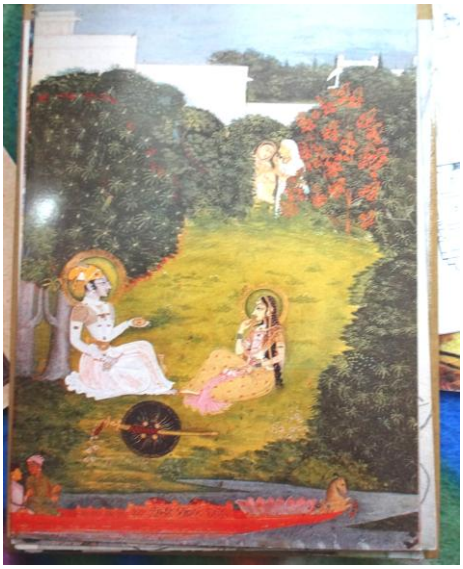

1750 राजस्थानी शैली (किशनगढ़)
राधा कृष्ण

1730 ई० में पहाड़ी शैली
(बसोहली)
कमलासन लक्ष्मी नारायण

व अप्रत्यक्ष

रूप में भारतीय समाज और भारतीय संस्कृति को सर्वोपरि रखा है। भारतीय कलाकार ने भारतीय संस्कृति की जो पहचान अपने चित्रों के माध्यम से उस समय व्यक्त की वह आज भी मानव द्वारा उस संस्कृति को कला में विद्यमान रखने के लिए प्रेरित करती है। भारतीय–कला भारतीय परम्पराओं लोक कलाओं आदि के रूप में भी भारतीय मानव को अपनी संस्कृति की ओर आकर्षित करती है और अपने वशीभूत कर भारतीय कलाकार को अपनी संस्कृति को जीवित रखने के लिए सदा प्रेरित करती है।